International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 8, August 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 (संशोधित 2016) की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक विश्लेषण

प्रवेश कुमार सिंह
प्रवक्ता–समाजशास्त्र
शहीद स्मारक राजकीय महाविद्यालय युसूफपुर मुहम्मदाबाद, गाजीपुर।

सारांश– भारत में बालश्रम एक गंभीर एवं बहुआयामी सामाजिक–आर्थिक समस्या है, जो न केवल बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास को प्रभावित करती है, बल्कि उनके शैक्षिक अधिकारों का भी हनन करती है। बालश्रम की समस्या का संबंध गरीबी, सामाजिक असमानता, शिक्षा के अभाव तथा सांस्कृतिक मान्यताओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। भारत सरकार ने इस समस्या के समाधान हेतु विभिन्न कानूनी एवं नीतिगत उपाय अपनाए हैं, जिनमें बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 एक प्रमुख कानून है, जिसे 2016 में संशोधित किया गया। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य इस अधिनियम की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक विश्लेषण करना है। यह अध्ययन द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है और इसमें बालश्रम की स्थिति, अधिनियम के प्रावधान, क्रियान्वयन की वास्तविकता तथा सामाजिक–आर्थिक बाधाओं का विश्लेषण किया गया है।
अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि बालश्रम के प्रत्यक्ष स्वरूप में कमी आई है, किंतु अनौपचारिक एवं घरेलू क्षेत्रों में इसका "अदृश्य" स्वरूप अभी भी व्यापक है। अधिनियम की प्रभावशीलता मुख्यतः कमजोर क्रियान्वयन, कानूनी अपवादों तथा सामाजिक स्वीकृति के कारण सीमित बनी हुई है।
मुख्य शब्द– बालश्रम, बालश्रम अधिनियम 1986, सामाजिक–आर्थिक असमानता, अनौपचारिक श्रम, नीति क्रियान्वयन, बाल अधिकार, ग्रामीण भारत

प्रस्तावना–

बालश्रम आधुनिक समाज की एक जटिल और बहुआयामी समस्या है, जो आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक कारकों के संयुक्त प्रभाव का परिणाम है। भारत जैसे विकासशील देश में यह समस्या विशेष रूप से गंभीर रूप धारण कर लेती है, जहाँ बड़ी संख्या में बच्चे विभिन्न प्रकार के श्रम में संलग्न पाए जाते हैं। यह स्थिति न केवल बच्चों के समग्र विकास में बाधा उत्पन्न करती है, बल्कि उनके मौलिक अधिकारों, विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षित बचपन का भी हनन करती है। बालश्रम को केवल आर्थिक विवशता का परिणाम मानना पर्याप्त नहीं है। यह सामाजिक संरचना, वर्गीय असमानता, लैंगिक भेदभाव तथा शिक्षा की कमी जैसे गहरे कारकों से जुड़ा हुआ है। गरीब परिवारों में बच्चों को कम उम्र में ही काम पर भेज दिया जाता है, ताकि वे परिवार की आय में सहयोग कर सकें। दूसरी ओर, समाज में बालश्रम के प्रति एक प्रकार की स्वीकृति भी देखने को मिलती है, जो इस समस्या को और अधिक जटिल बना देती है।

2015 के आंकड़ों के संदर्भ में यदि इस समस्या का विश्लेषण किया जाए, तो यह स्पष्ट होता है कि भारत में बालश्रम की स्थिति में कुछ सुधार अवश्य हुआ है, किंतु यह पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है। जनगणना 2011 के अनुसार देश में लगभग 1.01 करोड़ बाल श्रमिक पाए गए थे। इसके बाद के वर्षों में, विशेषकर एनएसएसओ (2015) के अनुमानों से यह संकेत मिलता है कि बालश्रम में आंशिक कमी आई है, परंतु इसका स्वरूप बदलकर अधिक जटिल और छिपा हुआ हो गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बालश्रम की समस्या अधिक व्यापक है, जहाँ बच्चे कृषि एवं उससे संबंधित कार्यों में लगे होते हैं। वहीं शहरी क्षेत्रों में बालश्रम का स्वरूप अधिकतर अनौपचारिक क्षेत्रकृजैसे छोटे उद्योग, ढाबे, दुकानों तथा घरेलू कार्योंकृमें देखने को मिलता है। इन क्षेत्रों में कार्यरत बच्चों की स्थिति अत्यंत असुरक्षित होती है, क्योंकि यहाँ श्रम कानूनों का पालन बहुत कमजोर होता है। बालश्रम के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि बालिकाओं का श्रम अक्सर "अदृश्य" रहता है। वे घर के कामकाज, छोटे भाई–बहनों की देखभाल तथा अन्य पारिवारिक कार्यों में लगी रहती हैं, जिन्हें औपचारिक रूप से

श्रम की श्रेणी में नहीं गिना जाता। इस कारण वास्तविकता में बालश्रम की समस्या आधिकारिक आंकड़ों से कहीं अधिक व्यापक है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बालश्रम एक गंभीर चिंता का विषय बना हुआ है। आईएलओ के अनुसार विकासशील देशों में बालश्रम का एक बड़ा हिस्सा अनौपचारिक एवं अदृश्य क्षेत्रों में केंद्रित है। भारत भी इस प्रवृत्ति से अछूता नहीं है। बालश्रम के पीछे कई सामाजिक–आर्थिक कारण कार्य करते हैं। इनमें गरीबी सबसे प्रमुख है, जो परिवारों को बच्चों से काम कराने के लिए बाध्य करती है। इसके अतिरिक्त शिक्षा की कमी, बेरोजगारी, सामाजिक असमानता तथा सस्ती श्रम की मांग भी इस समस्या को बढ़ावा देती हैं। कई बार माता–पिता स्वयं अशिक्षित होते हैं, जिससे वे शिक्षा के महत्व को नहीं समझ पाते और बच्चों को काम पर भेजना ही उचित मानते हैं।

सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए विभिन्न कानूनी उपाय किए हैं, जिनमें बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 एक महत्वपूर्ण कदम है। इस अधिनियम का उद्देश्य बालश्रम को नियंत्रित करना और खतरनाक उद्योगों में बच्चों के कार्य को प्रतिबंधित करना है। हालांकि, 2016 में किए गए संशोधन के बावजूद, 2015 के आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कानून का प्रभाव सीमित रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि कानून का क्रियान्वयन कमजोर है, निरीक्षण तंत्र पर्याप्त प्रभावी नहीं है, तथा "परिवार आधारित कार्य" जैसी छूटें कानूनी खामियों को जन्म देती हैं। इसके अतिरिक्त, अनौपचारिक क्षेत्र में कार्यरत बच्चों को कानून के दायरे में लाना भी एक बड़ी चुनौती है।

भारत में बालश्रम की समस्या में सुधार के संकेत अवश्य मिले हैं, किंतु यह अभी भी एक गंभीर सामाजिक चुनौती बनी हुई है। इसका समाधान केवल कानूनी उपायों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए सामाजिक जागरूकता, आर्थिक सुधार तथा शिक्षा के प्रसार की आवश्यकता है। जब तक समाज में बालश्रम के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण विकसित नहीं होगा और गरीब परिवारों को पर्याप्त आर्थिक सहायता नहीं मिलेगी, तब तक इस समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं हो सकेगा।

बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ –

भारत में बालश्रम की समस्या को नियंत्रित करने तथा बच्चों के अधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 लागू किया गया, जो समय–समय पर संशोधित होकर और अधिक प्रभावी बनाने का प्रयास किया गया है। यह अधिनियम न केवल बालश्रम को रोकने का कानूनी आधार प्रदान करता है, बल्कि बच्चों के समग्र विकास के लिए एक संरचनात्मक ढांचा भी प्रस्तुत करता है।

इस अधिनियम की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को श्रम से दूर रखने का प्रयास करता है, ताकि वे शिक्षा प्राप्त कर सकें और उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास बाधित न हो। विशेष रूप से खतरनाक उद्योगों और कार्यों में बालश्रम को पूर्णतः प्रतिबंधित किया गया है, क्योंकि ऐसे कार्य बच्चों के स्वास्थ्य और जीवन के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं। खनन, आतिशबाजी, रासायनिक उद्योग जैसे क्षेत्रों में बच्चों के कार्य करने पर पूर्ण रोक इस अधिनियम की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है।

अधिनियम की एक अन्य विशेषता यह है कि जहाँ पूर्ण प्रतिबंध संभव नहीं था, वहाँ कार्य की परिस्थितियों को विनियमित करने का प्रयास किया गया। कार्य के घंटे, विश्राम का समय तथा कार्यस्थल की परिस्थितियों को नियंत्रित कर बच्चों के शोषण को कम करने की दिशा में कदम उठाए गए। हालांकि बाद के संशोधनों ने इस दिशा में और अधिक कठोरता अपनाई है।

वर्ष 2016 में किए गए संशोधन इस अधिनियम को और अधिक व्यापक बनाते हैं। इस संशोधन के तहत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए लगभग सभी प्रकार के रोजगार पर प्रतिबंध लगा दिया गया, जबकि 14 से 18 वर्ष के किशोरों के लिए खतरनाक कार्यों में संलग्न होना पूरी तरह निषिद्ध किया गया। हालांकि, "परिवार आधारित कार्य" में दी गई छूट इस अधिनियम की एक विवादास्पद विशेषता है, क्योंकि इससे बालश्रम के छिपे हुए रूपों को बढ़ावा मिलने की संभावना बनी रहती है।

अधिनियम में दंडात्मक प्रावधानों का भी समावेश किया गया है, जिसके अंतर्गत बालश्रम कराने वाले नियोक्ताओं के लिए कड़ी सजा और जुर्माने का प्रावधान है। इसका उद्देश्य बालश्रम को हतोत्साहित करना और कानून के प्रति भय उत्पन्न करना है। साथ ही, अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए निरीक्षण एवं निगरानी तंत्र की व्यवस्था की गई है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि नियमों का पालन हो रहा है या नहीं।

यह अधिनियम बच्चों के मौलिक अधिकारों की रक्षा की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बालश्रम पर रोक लगाने से बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलता है, जिससे उनका भविष्य सुरक्षित होता है। इस प्रकार यह अधिनियम अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा के अधिकार को भी सुदृढ़ करता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम बच्चों के हितों की रक्षा और बालश्रम के उन्मूलन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यद्यपि इसकी कुछ सीमाएँ और चुनौतियाँ हैं, विशेषकर इसके क्रियान्वयन और कुछ कानूनी अपवादों के संदर्भ में, फिर भी यह अधिनियम भारतीय समाज में बाल अधिकारों की स्थापना की दिशा में एक सशक्त प्रयास के रूप में देखा जा सकता है।

बालश्रम का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य–

बालश्रम की समस्या को समझने के लिए केवल इसके प्रत्यक्ष कारणों, जैसे गरीबी या अशिक्षा का अध्ययन पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके पीछे कार्यरत व्यापक सामाजिक, आर्थिक एवं संरचनात्मक कारकों को समझना भी आवश्यक है। इसी संदर्भ में विभिन्न समाजशास्त्रीय सिद्धांत बालश्रम की प्रकृति, कारणों तथा प्रभावों को समझने के लिए एक सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं।

संरचनात्मक दृष्टिकोण के अनुसार बालश्रम सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं का परिणाम है। समाज में संसाधनों का असमान वितरण, वर्गीय विभाजन तथा अवसरों की कमी ऐसे कारक हैं, जो बच्चों को श्रम में धकेलते हैं। इस दृष्टिकोण में यह माना जाता है कि जब तक समाज में गरीबी और असमानता बनी रहेगी, तब तक बालश्रम जैसी समस्याएँ भी बनी रहेंगी।

मार्क्सवादी दृष्टिकोण बालश्रम को पूंजीवादी व्यवस्था का एक परिणाम मानता है। इस सिद्धांत के अनुसार पूंजीवादी समाज में उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण रखने वाला पूंजीपति वर्ग अधिक लाभ प्राप्त करने के लिए सस्ते श्रम की तलाश करता है। इस प्रक्रिया में बच्चों को कम मजदूरी पर कार्य में लगाया जाता है, जिससे उनका शोषण होता है। इस प्रकार बालश्रम को आर्थिक शोषण और वर्ग संघर्ष के संदर्भ में समझा जाता है।

इसके अतिरिक्त, कार्यात्मकतावादी दृष्टिकोण बालश्रम को समाज की संरचना के एक अंग के रूप में देखता है। यह दृष्टिकोण यह तर्क देता है कि कुछ समाजों में बालश्रम पारिवारिक एवं सामाजिक भूमिकाओं के निर्वहन का एक हिस्सा माना जाता है। हालांकि, आधुनिक समाज में यह दृष्टिकोण आलोचना का विषय है, क्योंकि यह बालश्रम को वैध ठहराने की संभावना उत्पन्न करता है।

अमर्त्य सेन द्वारा प्रतिपादित क्षमता दृष्टिकोण बालश्रम को बच्चों के अवसरों और स्वतंत्रताओं की कमी के रूप में देखता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार बालश्रम बच्चों के विकास की संभावनाओं को सीमित कर देता है, क्योंकि वे शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य आवश्यक सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं। अतः बालश्रम केवल आर्थिक समस्या नहीं, बल्कि मानव विकास की एक गंभीर बाधा है।

नारीवादी दृष्टिकोण बालश्रम के लैंगिक आयाम पर प्रकाश डालता है। इसके अनुसार बालिकाओं का श्रम अक्सर अदृश्य रहता है, क्योंकि वे घरेलू कार्यों में संलग्न रहती हैं, जिन्हें औपचारिक रूप से श्रम नहीं माना जाता। इस प्रकार बालश्रम की समस्या में लैंगिक असमानता भी एक महत्वपूर्ण तत्व है।

बालश्रम की समस्या बहुआयामी है, जिसे किसी एक सिद्धांत से पूरी तरह समझा नहीं जा सकता। विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोण मिलकर इस समस्या की गहराई और जटिलता को उजागर करते हैं। अतः बालश्रम के समाधान के लिए भी बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक एवं कानूनी सभी पहलुओं को सम्मिलित किया जाए।

बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 भारतीय संदर्भ में बालश्रम की समस्या को नियंत्रित करने हेतु एक महत्वपूर्ण विधिक प्रयास है। यह अधिनियम बच्चों को खतरनाक कार्यों से बचाने और उनके अधिकारों की रक्षा करने के उद्देश्य से बनाया गया था। तथापि, इसके लागू होने के कई वर्षों बाद भी इसकी प्रभावशीलता पर गंभीर प्रश्न उठते रहे हैं। एक आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो यह अधिनियम अपनी सीमाओं, क्रियान्वयन की कमजोरियों तथा सामाजिक–आर्थिक बाधाओं के कारण अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने में पूर्णतः सफल नहीं हो पाया है।

इस अधिनियम का एक सकारात्मक पक्ष यह है कि इसने बालश्रम को एक कानूनी और सामाजिक समस्या के रूप में मान्यता दी तथा खतरनाक उद्योगों में बालश्रम पर स्पष्ट प्रतिबंध लगाया। इससे बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता में वृद्धि हुई और कुछ क्षेत्रों में बालश्रम की स्थिति में सुधार भी

देखा गया। विशेषकर खतरनाक उद्योगों में बालश्रम की संख्या में कमी आना इस अधिनियम की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है।

हालांकि, इस अधिनियम की सबसे बड़ी कमजोरी इसके क्रियान्वयन में दिखाई देती है। जमीनी स्तर पर निरीक्षण तंत्र की कमी, प्रशासनिक उदासीनता तथा भ्रष्टाचार के कारण कानून का प्रभाव सीमित रह जाता है। कई स्थानों पर नियोक्ता नियमों का उल्लंघन करते हुए बच्चों से कार्य कराते हैं, लेकिन उन पर प्रभावी कार्रवाई नहीं हो पाती। इससे यह स्पष्ट होता है कि केवल कानून बनाना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसका प्रभावी क्रियान्वयन भी उतना ही आवश्यक है।

अधिनियम में निहित कुछ कानूनी प्रावधान भी आलोचना के विषय रहे हैं। विशेष रूप से 2016 के संशोधन में "परिवार आधारित कार्य" को दी गई छूट एक महत्वपूर्ण सववचीवसम के रूप में सामने आती है। इस प्रावधान के कारण बालश्रम के कई रूप कानूनी दायरे से बाहर रह जाते हैं, जिससे बालश्रम का "अदृश्य" स्वरूप बढ़ता है। नियोक्ता इस प्रावधान का दुरुपयोग कर बच्चों से कार्य करवा सकते हैं, जिससे अधिनियम का मूल उद्देश्य कमजोर पड़ जाता है।

इसके अतिरिक्त, यह अधिनियम मुख्यतः औपचारिक क्षेत्रों पर केंद्रित है, जबकि भारत में बालश्रम का बड़ा हिस्सा अनौपचारिक क्षेत्र में पाया जाता है। घरेलू कार्य, कुटीर उद्योग, कृषि तथा छोटे व्यवसायों में कार्यरत बच्चों को इस अधिनियम के अंतर्गत प्रभावी रूप से नियंत्रित करना कठिन होता है। परिणामस्वरूप, बालश्रम का एक बड़ा हिस्सा कानून की पहुँच से बाहर रह जाता है।

सामाजिक–आर्थिक कारक भी इस अधिनियम की प्रभावशीलता को सीमित करते हैं। गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा तथा सामाजिक असमानता जैसे कारक परिवारों को बच्चों से काम कराने के लिए बाध्य करते हैं। जब तक इन मूलभूत समस्याओं का समाधान नहीं किया जाएगा, तब तक केवल कानूनी उपायों से बालश्रम को समाप्त करना संभव नहीं है। कई बार परिवार स्वयं बच्चों को काम पर भेजते हैं, क्योंकि उनके लिए यह आर्थिक आवश्यकता बन जाती है।

एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि समाज में बालश्रम के प्रति एक प्रकार की स्वीकृति भी मौजूद है। कई लोग इसे सामान्य मानते हैं, विशेषकर पारिवारिक व्यवसायों में। यह सामाजिक दृष्टिकोण कानून के प्रभाव को कमजोर करता है और बालश्रम के उन्मूलन में बाधा उत्पन्न करता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम ने बालश्रम की समस्या को नियंत्रित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान किया है, किंतु इसकी प्रभावशीलता सीमित रही है। इसके पीछे मुख्य कारण कमजोर क्रियान्वयन, कानूनी अपवाद, अनौपचारिक क्षेत्र की व्यापकता तथा सामाजिक–आर्थिक बाधाएँ हैं। अतः आवश्यक है कि इस अधिनियम को अधिक प्रभावी बनाने के लिए न केवल इसके प्रावधानों में सुधार किया जाए, बल्कि सामाजिक जागरूकता, शिक्षा के प्रसार तथा आर्थिक सशक्तिकरण जैसे उपायों को भी समान महत्व दिया जाए।

निष्कर्ष–

भारत में बालश्रम एक जटिल एवं बहुआयामी सामाजिक–आर्थिक समस्या है, जिसका समाधान केवल विधिक उपायों के माध्यम से संभव नहीं है। बालश्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 तथा इसके 2016 संशोधन ने बालश्रम को नियंत्रित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कानूनी आधार अवश्य प्रदान किया है, किंतु इसकी प्रभावशीलता सीमित रही है। बालश्रम के प्रत्यक्ष स्वरूप में आंशिक कमी आई है, परंतु इसका अदृश्य एवं अनौपचारिक स्वरूप अभी भी व्यापक रूप से विद्यमान है। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों, कृषि क्षेत्र तथा घरेलू कार्यों में संलग्न बच्चों की वास्तविक संख्या आधिकारिक आंकड़ों से अधिक होने की संभावना है। यह स्थिति इस तथ्य को रेखांकित करती है कि वर्तमान कानूनी ढांचा बालश्रम के बदलते स्वरूप को पूरी तरह संबोधित करने में सक्षम नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि बालश्रम उन्मूलन के लिए एक समग्र एवं बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया जाए, जिसमें कानूनी प्रावधानों के साथ–साथ शिक्षा के प्रसार, सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के सुदृढ़ीकरण, आर्थिक सशक्तिकरण तथा सामाजिक जागरूकता को भी समान महत्व दिया जाए। साथ ही, नीतियों के प्रभावी क्रियान्वयन, निगरानी तंत्र की मजबूती तथा कानूनी प्रावधानों में आवश्यक सुधार भी अनिवार्य हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि बालश्रम की समस्या केवल एक कानूनी या आर्थिक मुद्दा नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, मानवाधिकार तथा समावेशी विकास से जुड़ा हुआ प्रश्न है। जब तक समाज

के प्रत्येक स्तर पर इस समस्या के प्रति संवेदनशीलता और प्रतिबद्धता विकसित नहीं होगी, तब तक बालश्रम का स्थायी समाधान संभव नहीं हो सकेगा।

संदर्भ सूची–

1. Census of India. (2011). *Primary Census Abstract Data*. Government of India.
2. National Sample Survey Office (NSSO). (2015). *Employment and Unemployment Situation in India*. Ministry of Statistics and Programme Implementation.
3. Ministry of Labour and Employment. (2016). *Child Labour (Prohibition and Regulation) Amendment Act*. Government of India.
4. International Labour Organization. (2015). *Global Estimates of Child Labour: Results and Trends*.
5. UNICEF. (2015). *Child Labour and Education Report*. United Nations Children's Fund.
6. World Bank. (2015). *World Development Indicators: Child Labour Data*.
7. Basu, K., & Van, P. H. (1998). The economics of child labour. *American Economic Review*, 88(3), 412–427.
8. Bourdillon, M. (2006). Children and work: A review of current literature. *Development and Change*, 37(6), 1201–1226.
9. Edmonds, E. V. (2007). Child labour. *Handbook of Development Economics*, 4, 3607–3709.
10. Government of India. (2017). *National Policy on Child Labour*. Ministry of Labour and Employment.
11. International Labour Organization. (1973). *Minimum Age Convention (No. 138)*.
12. International Labour Organization. (1999). *Worst Forms of Child Labour Convention (No. 182)*.
13. Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
14. Nussbaum, M. (2000). *Women and Human Development: The Capabilities Approach*. Cambridge University Press.
15. Human Rights Watch. (2014). *India: Child Labour Violations Report*.
16. Planning Commission of India. (2015). *Report on Child Labour and Education*. Government of India.